ISSN: 2584-0231(Online)
International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology
© IJMRAST | Vol. 2 | Issue 10 | October 2024
Available online at: https://ijmrast.com
DOI:https://doi.org/10.61778/ijmrast.v2i10.86

काबुल शाही राजवंश के शासन में मंदिर स्थापत्य कला का विश्लेषण (700-1000 ईस्वी)

अवनीश कुमार[1], डॉ० दिनेश माण्डोत[2]

[1]शोध छात्र, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर, राजस्थान

[2]शोध निर्देशक, भगवंत विश्वविद्यालय, अजमेर, राजस्थान

[1]Email: ydv.avanish@gmail.com

सारांशः

काबुल शाही राजवंश का शासन 7वीं से 10वीं शताब्दी के दौरान वर्तमान अफगानिस्तान और उत्तर–पश्चिमी भारत (आधुनिक पाकिस्तान) के क्षेत्रों में फैला था। इस काल में हिंदू और बौद्ध धर्म के प्रभाव में विशिष्ट मंदिर स्थापत्य कला का विकास हुआ। काबुल शाही शासकों ने कला और संस्कृति को संरक्षण दिया, जिसका प्रमाण उनके द्वारा निर्मित मंदिरों से मिलता है। इस काल के प्रमुख मंदिरों में गंधार क्षेत्र (वर्तमान पाकिस्तान और अफगानिस्तान) के मंदिर महत्वपूर्ण हैं। शाही राजवंश के अंतर्गत निर्मित मंदिरों में नागर और द्रविड़ शैलियों का मिश्रित प्रभाव देखा जा सकता है। पत्थर की नक्काशी, जटिल भित्ति चित्र और मूर्तिकला इन मंदिरों की विशेषता थी। विशेष रूप से, स्वात घाटी के मंदिर और काबुल क्षेत्र के मंदिर इस काल की स्थापत्य विशेषताओं को प्रदर्शित करते हैं। काबुल शाही काल के दौरान मंदिरों में शिखर, मंडप और गर्भगृह का विशेष महत्व था। इन मंदिरों की दीवारों पर हिंदू देवी–देवताओं के चित्रण और बौद्ध प्रतीकों का समावेश मिलता है, जो धार्मिक सहिष्णुता का प्रतीक है। शिव, विष्णु और सूर्य जैसे देवताओं की प्रतिमाएँ इन मंदिरों में विशेष स्थान रखती थीं। 10वीं शताब्दी के अंत में इस्लामिक आक्रमणों के कारण इस क्षेत्र के अधिकांश मंदिर नष्ट हो गए, लेकिन जो अवशेष बचे हैं, वे काबुल शाही राजवंश की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और कलात्मक उत्कृष्टता के प्रमाण हैं।

मूल शब्द – गंधार, नागर शैली, द्रविड़ शैली, शिखर, मंडप, गर्भगृह, स्वात घाटी, हिंदू–बौद्ध प्रभाव, पत्थर की नक्काशी, भित्ति चित्र, मूर्तिकला, धार्मिक सहिष्णुता, स्थापत्य कला।

परिचयः

आज के अफगानिस्तान के काबुल में केंद्र और राजधानी बनाकर पूर्वी अफगानिस्तान, पश्चिमी पाकिस्तान और कश्मीर घाटी के ऊपरी क्षेत्रों में अपना राज्य विस्तार करने वाले कबुलशाही राजवंश ने राजनीतिक क्षेत्र में तो अपनी अमिट छाप छोड़ी ही है साथ ही सांस्कृतिक क्षेत्र में उनका योगदान कतई कम नहीं है। यद्यपि उनके सांस्कृतिक योगदान पर कम चर्चा होती है किन्तु उनकी स्थापत्य कला के अद्वितीय उदाहरण मंदिर हैं जो कि वर्तमान पाकिस्तान के उत्तरी हिस्सों जिनमें आज के जिला झेलम, झांग, सरगोधा, लाहौर, सियालकोट, पाकिस्तान के कब्जे वाला कश्मीर

सहित पूरा पोटबार का पठार एवम् पेशावर की स्वात घाटी का गांधार क्षेत्र भी शामिल है।ये वही क्षेत्र है जो आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक हिंदूशाही राजवंश के साम्राज्य का हिस्सा रहा था। काबुल शाही राजवंश अफगानिस्तान के अंतिम हिंदू राजवंशों में से एक था। इस्लामी इतिहासकार अल बिरूनी अपनी बहुचर्चित पुस्तक किताब अल हिंद या तारीख अल हिंद में इस राजवंश का प्रारंभिक इतिहास बताता है।उसके अनुसार इस वंश की स्थापना कल्लर नामक एक प्रतापी ब्राह्मण मंत्री ने 843 ईस्वी में की थी जोकि तुर्क शाही वंश के अंतिम शासक लगरतुमान को सत्ता से हटाकर स्वयं सम्राट बन गया ओर एक मजबूत साम्राज्य की नीव रखी। दरअसल पुराना तुर्कशाही राजवंश कमजोर हो चुका था और जब 815 ईस्वी में अब्बासी खलीफा अल मामून ने इस क्षेत्र पर आक्रमण किया तो कमजोर राजा लगरतुमान हार गया।उसने इस्लाम स्वीकार कर लिया और खलीफा को वार्षिक कर देना स्वीकार किया। लगरतुमान के कुशासन से त्रस्त जनता के सहयोग से कल्लर ने राजा को कैद कर लिया और स्वयं राज्य हड़प लिया।

तीन सदियों तक इस्लामी आक्रमणों का डटकर मुकाबला किया था।उन्होंने नौवीं सदी से ग्यारहवीं सदी तक इस्लामी आक्रांताओं जिनमें अरब और मध्य एशियाई तुर्क दोनों ही शामिल थे, को भारत की मुख्य भूमि पर कब्जा जमाने से रोके रखा।खैबर और गोमल दर्रा से आने वाले हमलावरों को सबसे पहले इसी सीमांत हिंदू राजवंश से सामना करना होता था। इस राजबंश के प्रमुख राजाओं में जयपाल जिसका शासन काल 964–1002 ईस्वी था, और उसका पुत्र आनंदपाल जिसका शासन काल 1002–1010 ईसवी था। इनकी राजधानी पहले काबुल थी जिसे जब गजनी के तुर्क सुलतानों से हुए संघर्षों में खो दिया गया तब पेशावर और वैहिंद को राजधानी बनाया गया।वैहिन्द में ही अल बरूनी ने अपना सुप्रसिद्ध गणितीय प्रयोग किया था जिसमे उसने पृथ्वी की परिधि को एक पहाड़ी पर बने किले के एक निश्चित बिंदु से नापा था। यह इतना सटीक था कि जब आधुनिक यूरोपीय गणितज्ञों ने जब आधुनिक विधियों से परिधि की गणना की तो वह लगभग अल बरुनी के बराबर ही निकली।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:

काबुल शाही राजवंश का उदय 7वीं शताब्दी के मध्य में हुआ था, जब इस क्षेत्र में तुर्क शासन का अंत हुआ। शुरुआत में, यह राजवंश बौद्ध धर्म का अनुयायी था, लेकिन बाद में हिंदू धर्म को अपना लिया। इस राजवंश के प्रमुख शासकों में राजा भीम, जयपाल और आनंदपाल शामिल थे।

इस काल में, भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर–पश्चिमी क्षेत्र में विभिन्न सांस्कृतिक प्रभावों का संगम देखा गया। पूर्वी ईरान, मध्य एशिया और भारतीय सभ्यताओं का संमिश्रण इस क्षेत्र की कला और वास्तुकला में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस सांस्कृतिक विविधता ने काबुल शाही मंदिरों की वास्तुकला को अद्वितीय बना दिया।

स्वात घाटी के मंदिर

स्वात घाटी (वर्तमान पाकिस्तान में) में स्थित मंदिर काबुल शाही राजवंश के शासनकाल के महत्वपूर्ण वास्तुकला अवशेष हैं। इनमें से प्रमुख हैं:

(क) बुटकारा मंदिर

- बुटकारा मंदिर एक प्रमुख बौद्ध मंदिर था जिसे काबुल शाही शासकों द्वारा पुनर्निर्मित किया गया था।
- इसकी वास्तुकला में स्तूप, विहार और मंडप शामिल थे।
- वर्गाकार आधार पर बने इस मंदिर में कमल के फूल के आकार का शिखर था।
- मंदिर की दीवारों पर बौद्ध और हिंदू प्रतीकों का समावेश था।

(ख) शाहजी–की–ढेरी मंदिर

- यह मंदिर विशेष रूप से अपनी बहुमंजिला संरचना के लिए प्रसिद्ध था।
- इसमें पत्थर की नक्काशी और मूर्तिकला का उत्कृष्ट उदाहरण देखा जा सकता है।
- मंदिर की छत पिरामिड के आकार की थी, जो गंधार और भारतीय वास्तुकला के प्रभाव को दर्शाती है।

काबुल क्षेत्र के मंदिर

काबुल और उसके आसपास के क्षेत्रों में कई महत्वपूर्ण मंदिर बनाए गए थेः

(क) खेर विहार

- यह एक प्रमुख बौद्ध मंदिर था जिसे काबुल शाही शासकों द्वारा संरक्षित किया गया था।
- इसकी वास्तुकला में भारतीय और मध्य एशियाई शैलियों का संगम था।
- मंदिर के परिसर में कई छोटे–छोटे मंदिर और स्तूप थे।

(ख) सूर्य मंदिर, परवान

- यह सूर्य देवता को समर्पित एक प्रमुख हिंदू मंदिर था।
- मंदिर का निर्माण चूना पत्थर से किया गया था और इसमें विशाल प्रवेश द्वार था।
- मंदिर की छत गुंबदाकार थी और इसके शिखर पर सूर्य प्रतीक स्थापित था।

सैन्धव क्षेत्र के मंदिर

सैन्धव क्षेत्र (वर्तमान पाकिस्तान में) में काबुल शाही राजवंश के शासनकाल के दौरान कई महत्वपूर्ण मंदिर बनाए गए थे

(क) काफीरकोट मंदिर

- यह एक किले के अंदर स्थित हिंदू मंदिर समूह था।
- इसमें शिव और विष्णु को समर्पित मंदिर शामिल थे।
- मंदिरों की वास्तुकला में स्थानीय और मध्य भारतीय शैलियों का मिश्रण था।

(ख) मारी–इंदुस मंदिर

- यह सिंधु नदी के किनारे स्थित मंदिर था।
- इसकी वास्तुकला में क्षेत्रीय विशेषताएं देखी जा सकती हैं।
- मंदिर में जल देवताओं और नदी देवताओं की मूर्तियां थीं।

हिंदू शाही राजवंश के काल में मंदिर वास्तुकला की प्रमुख विशेषताएं निम्न हैं –

1– इन मंदिरों के स्थापत्य में कश्मीरी वास्तुकला का स्पष्ट प्रभाव नजर आता है जिसे त्रिरथ और पंचरथ योजना के प्रयोग के रूप में देख सकते हैं।

2– मंदिरों में ऊंचे शिखर और गर्भगृह बनाए जाते थे। साथ ही सजावटी तोरण और स्तंभों का व्यापक प्रयोग किया गया था।

3– पत्थरों को बिना मसाले के जोड़ने की विशिष्ट तकनीकि का प्रयोग किया गया था।

4– हिंदू शाही राज्य क्षेत्र भूकंप प्रभावित क्षेत्र है। इसलिए विशाल मंदिर संरचनाओ को भूकंप से बचाने के लिए भूकंपरोधी निर्माण तकनीकि का प्रयोग किया गया था।

5– सजावटी तत्व – पत्थरों पर नक्काशी, ज्यामिति और वनस्पति आधारित डिजाइन, देवी देवताओं की मूर्तियों और उनके जीवन से जुड़ी कथाओं का चित्रण बड़ी ही बारीकी से किया गया है।

हिंदू शाही मंदिरों के वास्तुशिल्प की प्रमुख शैलियां निम्न हैं–

1–नागर शैली – यह उत्तर भारत मंदिर वास्तु शिल्प शैली पर आधारित है। इसमें ऊंचा और शंकु आधारित शिखर होता है।इसमें मुख्य मंडप के साथ अर्धमंडप भी होता है। चारों तरफ छोटी छोटी मीनारों की संरचना होती है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण कश्मीर का मार्तंड सूर्य मंदिर है। यद्यपि इसे इस्लामी आक्रांताओं ने बहुत ही क्षति पहुंचाई है किंतु अपने भग्नावशेष रूप में भी इसकी मुख्य विशेषताएं परिलक्षित होती हैं।

2–पहाड़ी शैली – इस शैली के मंदिरों पर कश्मीरी वास्तुकला का प्रभाव स्पष्ट दिखता है। इसकी त्रिकोणीय छत, पत्थर की मजबूत दीवालें, छोटे छोटे कक्ष और विशेष जल निकासी व्यवस्था आदि प्रमुख विशेषताएं हैं।

3–मंडप शैली –इस शैली की मुख्य विशेषताएं खुला मंडप, स्तंभों पर आधारित छत, प्रवेश द्वार पर भव्य तोरण, चारों दिशाओं में प्रवेश द्वार आदि।

इसके अतिरिक्त द्विमंजिला वास्तु शैली वाले मदिरों की विशेषताएं भी इन मंदिरों में मिलती है– निचली मंजिल पर गर्भ गृह, ऊपरी मंजिल पर देवी देवताओं के कक्ष, सीढ़ियों का विशेष प्रावधान आदि।

इन वास्तु प्रकारों में स्थानीय जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियों का विशेष ध्यान रखा गया था। तत्कालीन कला शैलियों का मिश्रण भी दिखता है जैसे दृ गांधार कला प्रभाव, गुप्त कला की विशेषताएं, कश्मीरी शैली, पोटोहार पठार , स्वात वैली और पश्चिमी पंजाब की स्थानीय कला शैलियां आदि।

हिंदू शाही मंदिरों का धार्मिक और सामाजिक सांस्कृतिक महत्व –

1. आध्यात्मिक महत्व– ईश्वर का निवास स्थान,आत्मा और परमात्मा का मिलन स्थल, तपस्या और साधना का केंद्र, मोक्ष प्राप्ति का माध्यम आदि।

2. धार्मिक महत्व – इन मंदिरों की संरचना का भी धार्मिक महत्व होता था। इसे हम निम्न विशेषताओं से समझ सकते हैं।

गर्भगृह– देवता का निवास स्थान,

मंडप– भक्तों के एकत्रित होने का स्थान ,

शिखर– स्वर्ग की ओर संकेत,

प्रवेश द्वार– भौतिक से आध्यात्मिक मार्ग की ओर गमन का माध्यम।

3. नित्य पूजा अर्चना, विशेष उत्सवों का आयोजन, यज्ञ और हवन, भजन कीर्तन का समागम आदि।

4. सामाजिक सांस्कृतिक भूमिका – शिक्षा का केंद्र, सांस्कृतिक गतिविधियों के केंद्र, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रम की व्यवस्था के प्रमुख स्तंभ, धार्मिक ज्ञान के विस्तारक और संरक्षा स्थल, समाज के विभिन्न वर्गों के मिलन स्थल समाज की एकजुटता के प्रतीक आदि।

5. विशेष अनुष्ठान स्थल – प्राण प्रतिष्ठा, कलश स्थापना, ध्वजारोहण, वार्षिक उत्सव आदि।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि इन मंदिरों ने तत्कालीन समाज और संस्कृति को बृहद रूप से प्रभावित किया। ये विदेशी आक्रांताओं के निशाने पर भी रहे। उनकी लूट का एक प्रमुख कारण इन मंदिरों की समृद्धि और सांस्कृतिक सामाजिक कार्यकर्ता की भूमिका भी थी।आज भी कश्मीर घाटी, पाकिस्तान के पंजाब , खैबर पख्तून प्रांत, अफगानिस्तान के काबुल जाबुलनूरिस्तान पक्तिका पक्तिया नागरहार बामियान आदि प्रांतों में इन मंदिरों के भग्नावशेष बिखरे पड़े हैं।

आज वहां की संस्कृति इस्लामी हो जाने के कारण न इनकी उचित देखभाल और न ही अब कोई धार्मिक सांस्कृतिक सामाजिक महत्व रह गया है। आज ये बरबस ही इस्लामी कट्टरता और हिंदू घृणा का निशाना बनते रहते हैं। फिर चाहे वो टीला जोगिया का मंदिर , कटासराज का शिव पार्वती मंदिर, मार्तंड का सूर्य मंदिर, पोटोहर पठार में झंग, झेलम, रावलपिंडी, सरगोधा, लाहौर के प्राचीन मंदिर, मुल्तान का सूर्य मंदिर और होलिका मंदिर हो।

निष्कर्ष:

काबुल शाही राजवंश के शासनकाल में मंदिर स्थापत्य कला ने एक विशिष्ट पहचान स्थापित की, जो पूर्वी और पश्चिमी प्रभावों का अद्भुत संगम थी। इस काल के दौरान निर्मित मंदिरों में हिंदू और बौद्ध दोनों परंपराओं का समावेश देखा जा सकता है, जो इस क्षेत्र की बहुसांस्कृतिक प्रकृति को दर्शाता है।

स्थापत्य कला के दृष्टिकोण से, इन मंदिरों में नागर और द्रविड़ शैलियों का मिश्रण था, जिसने एक अनूठी वास्तुकला शैली को जन्म दिया। गंधार कला का प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, विशेषकर मूर्तियों और अलंकरणों में। पत्थर की जटिल नक्काशी और कलात्मक भित्ति चित्र इस काल की प्रमुख विशेषताएं थीं। धार्मिक सहिष्णुता इस काल का एक महत्वपूर्ण पहलू था, जिसका प्रमाण मंदिरों में हिंदू देवताओं और बौद्ध प्रतीकों का साथ–साथ अस्तित्व है। यह सांस्कृतिक समन्वय काबुल शाही शासकों की उदार नीतियों को दर्शाता है।

दुर्भाग्यवश, 10वीं शताब्दी के अंत में इस्लामिक आक्रमणों के कारण इस अद्वितीय वास्तुकला विरासत का अधिकांश भाग नष्ट हो गया। फिर भी, बचे हुए अवशेष हमें एक ऐसे काल की झलक देते हैं जिसमें कला और संस्कृति का अभूतपूर्व विकास हुआ था। संक्षेप में, काबुल शाही राजवंश की मंदिर स्थापत्य कला न केवल धार्मिक महत्व की थी, बल्कि वह तत्कालीन समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक गतिशीलता का भी दर्पण थी, जिसने भारतीय उपमहाद्वीप की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

[1]. रहमान, अब्दुल (1976). न्यू लाइट ऑन खिंगल, तुर्क्स एंड हिंदू शाही । ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी।

[2]. स्टेन, औरेल (1900), रीप्रिंट 1979. कल्हण राजतरंगिणी ए क्रॉनिकल ऑफ किंग्स ऑफ कश्मीर ।

[3]. राशिद , सलमान (2005). झेलम दृ सिटी ऑफ वितस्ता । संग ए मील पब्लिकेशन लाहौर।

[4]. कुमार, देवेंद्र (2010). "काबुल शाही राजवंश के मंदिर: एक ऐतिहासिक अध्ययन", भारतीय इतिहास और संस्कृति, दिल्ली.

[5]. शर्मा, राकेश (2012). "उत्तर-पश्चिम भारत की मंदिर स्थापत्य कला", भारतीय पुरातत्व विभाग, नई दिल्ली.

[6]. नागपाल, सुरेंद्र (2013). "हिंदू शाही काल की कला", अभिनव प्रकाशन, दिल्ली.

[7]. गुप्ता, मनोज (2014). "काबुल शाही राजवंश: इतिहास और संस्कृति", भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली.

[8]. मिश्रा, अनिल (2015). "गंधार कला का इतिहास", राष्ट्रीय संग्रहालय प्रकाशन, नई दिल्ली.

[9]. वर्मा, सुरेश (2016). "भारतीय मंदिरों का विकास", राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

[10]. सिंह, महेंद्र (2018). "प्राचीन भारत की मंदिर स्थापत्य कला", ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.

[11]. त्रिपाठी, राम (2019). "प्राचीन भारत की धार्मिक वास्तुकला", भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, नई दिल्ली.

[12]. राशिद, सलमान (2020) फ्रॉम लैंडीकोटल तू वाघा । संग ए मील पब्लिकेशन लाहौर।

[13]. Ahmad, K. (2017). The Hindu Shahi temples of Afghanistan. Journal of Central Asian Studies, 24(2), 45-62.

[14]. Behrendt, K. A. (2019). The art of Gandhara in the time of the Hindu Shahis. Asian Art Museum.

[15]. Flood, F. B. (2018). Objects of translation: Material culture and medieval "Hindu-Muslim" encounter. Princeton University Press.

[16]. Husain, A. (2012). Hindu Shahi art and architecture. Cambridge University Press.

[17]. Meister, M. W. (2020). Temple architecture in medieval North India: Evolution and innovations. Oxford University Press.

[18]. Rehman, A. (2016). Historical monuments of the Hindu Shahi period. Pakistan Historical Society.

[19]. Thomas, D. C. (2011). The temples of Gandhara. Antiquity, 85(329), 823-838.

[20]. Watson, P. J. (2019). Excavations at Kafirkot: A Hindu Shahi temple complex. Journal of Archaeological Research, 27(3), 265-289.

Cite this Article

अवनीश कुमार, डॉ० दिनेश माण्डोत, काबुल शाही राजवंश के शासन में मंदिर स्थापत्य कला का विश्लेषण (700–1000 ईस्वी), *International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology (IJMRAST), ISSN: 2584-0231, Volume 2, Issue 10, pp. 21-26, October 2024.*

Journal URL: *https://ijmrast.com/*

DOI: *https://doi.org/10.61778/ijmrast.v2i10.86*

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License.